पुणे नगरपालिका निगम

बनाम

प्रवर्तक और निर्माता संगठन व अन्य

5 मई, 2004

[एस. राजेंद्र बाबू, सी.जे. और जी.पी. माथुर, जे.]

महाराष्ट्र क्षेत्रीय और नगर योजना अधिनियम, 1966-धारा 37-नगर निगम द्वारा विकास नियंत्रण नियमों में प्रस्तावित संशोधनों की मंजूरी के लिए राज्य सरकार के समक्ष प्रस्तुति दी गई- मंजूरी से पूर्व राज्य सरकार द्वारा कुछ बदलाव, बिना आपत्ति या सुझावों को आमंत्रित किए, किए गए-बदलावों की वैधता को चुनौती दी गई- अभिनिर्धारित- राज्य सरकार के पास मंजूरी देने से पहले प्रस्तावित संशोधनों में सीमा के भीतर आंशिक बदलाव करने का व्यापक विवेक है- हस्तगत मामले में राज्य सरकार द्वारा किए गए परिवर्तन मनमाने या अनुचित नहीं थे इसलिए वह वैध है।

राज्य सरकार ने अपीलार्थी- निगम को एक निर्देश महाराष्ट्र क्षेत्रीय और नगर योजना अधिनियम, 1966 की धारा 37 के तहत जारी किया कि वह अपने विकास नियंत्रण नियमों (डी.सी.आर) में बॉम्बे विकास नियंत्रण नियमों की तर्ज पर संशोधन करे।अपीलार्थी ने डी. सी. आर. के प्रस्तावित

संशोधनों को आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित किया और अधिनियम की धारा 37 (1) के तहत आपत्तियां और सुझाव आमंत्रित किए। अपीलार्थी ने प्रस्तावित संशोधनों को मंजूरी के लिए राज्य सरकार को प्रस्तुत किया। राज्य सरकार ने नियमों में कुछ बदलाव करने के बाद प्रस्तावित संशोधनों को मंजूरी दी और उन्हें अधिसूचित किया। प्रत्यर्थियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष बदलावों को राज्य सरकार की धारा 37 में निहित शक्तियों के परे होने के आधार पर चुनौती देते हुए रिट याचिकाएं दायर की। न्यायालय ने रिट याचिकाओं को मंजूरी दे दी। अतः अपीलार्थी-निगम द्वारा अपील की गई।

अपीलों को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि

1.1. महाराष्ट्र क्षेत्रीय और नगर योजना अधिनियम, 1966 की धारा 37 (1) के तहत योजना प्राधिकरण प्रस्तावित संशोधन के संबंध में आपत्तियां और सुझाव आमंत्रित करने के बाद और सभी प्रभावित व्यक्तियों को नोटिस देने के बाद, राज्य सरकार को मंजूरी के लिए प्रस्तावित संशोधन प्रस्तुत करेंगे।

1.2. संशोधन करने से पहले जनता के साथ विचार-विमर्श इस स्तर पर समाप्त हो जाता है। इसके बाद, राज्य सरकार को अधिनियम की धारा

37(2) के तहत अनुमोदन प्रदान करने से पहले आवश्यक जांच करने या नहीं करने की पूर्ण स्वतंत्रता दी गई है। साथ ही, अनुमोदन प्रदान करते समय, राज्य सरकार ऐसा संशोधनों के साथ या बिना कर सकती है। राज्य सरकार ऐसी शर्तें लगा सकती हैं जो उसे उचित लगे। राज्य सरकार को स्वीकृति से इनकार करने की भी अनुमति है। यह अधिनियम की धारा 37(2) का वास्तविक अर्थ है। उच्च न्यायालय द्वारा दी गई विपरीत व्याख्या को बनाए रखना कठिन है। अधिनियम की धारा 37(1) के तहत राज्य सरकार के लिए की गई मुख्य परिसीमा यह है कि कोई भी प्राधिकरण विकास योजना के मूल चरित्र को बदलने के लिए संशोधन प्रस्तावित नहीं कर सकता है। प्रस्तावित संशोधन विकास योजना की सीमा के भीतर केवल मामूली ही हो सकता है। और ऐसे मामूली परिवर्तनों के लिए, राज्य सरकार द्वारा विभिन्न प्रासंगिक कारकों को ध्यान में रखते हुए व्यापक विवेक का प्रयोग करना सामान्य है। दोबारा, अगर यह मनमाना या अनुचित है, तो इसे चुनौती दी जा सकती है। विकास नियंत्रण नियम (डी.सी.आर) बनाना या उनमें संशोधन करना विधायी कार्य हैं। इसलिए, अधिनियम की धारा 37 को डी.सी.आर में संशोधन करने के लिए विधायी शक्तियों के भंडार के रूप में देखा जाना चाहिए। डी.सी.आर में संशोधन की वह विधायी शक्ति राज्य सरकार को प्रत्यायोजित की गई है। अधिनियम की धारा 37(2) की सही व्याख्या राज्य सरकार को आवश्यक संशोधन करने

या अनुमोदन प्रदान करते समय शर्तें लगाने की अनुमति देती है। अधिनियम की धारा 37(2) में, विधायिका की मंशा, अनुमोदन प्रदान करने से पहले सार्वजनिक सुनवाई का प्रावधान करना नहीं है। इस तरह के संशोधन करने की प्रक्रिया धारा 37 में प्रदान की गई है। प्रतिनिधि विधान को उसके बनाने में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करने के लिए प्रश्न नहीं किया जा सकता है, सिवाय इसके कि जब स्वयं विधान उस आवश्यकता के लिए प्रावधान करता है। जहां विधायिका ने किसी सूचना या सुनवाई का प्रावधान करना नहीं चुना है, तो कोई भी उस पर जोर नहीं दे सकता है और ऐसी विधायी गतिविधि में प्राकृतिक न्याय को पढ़ने की अनुमति नहीं है। इसके अलावा, एक अधीनस्थ विधान निकाय द्वारा 'ऐसी जांच जैसी वह आवश्यक समझ सकती है' के लिए प्रावधान आम तौर पर अधीनस्थ विधान निकाय को किसी भी स्रोत से प्रासंगिक जानकारी प्राप्त करने की सुविधा प्रदान करने के लिए एक सक्षम प्रावधान है और इसका उद्देश्य किसी में कोई अधिकार निहित करना नहीं है। विधायी कार्य करते समय, जब तक अनुचितता या मनमानी को इंगित नहीं किया जाता है, तब तक न्यायालय के लिए हस्तक्षेप करना सही नहीं है।

भारत संघ व अन्य बनाम साइनामाइड इंडिया लिमिटेड व अन्य, [1987] 2 एस. सी. सी. 720; एच.एस.एस. के. नियामी व अन्य बनाम भारत संघ व अन्य, [1990] 4 एस.सी.सी. 516; केनरा बैंक बनाम

देबाशीष दास, [2003] 4 एस.सी.सी. 557 और ओ.एन.जी.सी. बनाम एस.एन. गुजरात के प्राकृतिक गैस उपभोक्ता उद्योगों का, [1990] पूरक एस.सी.सी. 397, को संदर्भित किया गया।

1.3 विकास नियंत्रण नियम अधिनियम की धारा 158 के तहत बनाए गए हैं। किसी अधिनियम के प्रावधानों के तहत बनाए गए नियम अधिनियम का ही हिस्सा होते हैं। दूसरे शब्दों में, उनके पास वैधानिक बल है। यह भी कानून की एक सुस्थापित स्थिति है कि किसी अधिनियम के विरुद्ध कोई 'प्रॉमिसरी एस्टॉपेल' नहीं हो सकता है। इसलिए, उच्च न्यायालय ने फिर से गलती की जब उसने प्रतिवादी द्वारा दायर याचिका को स्वीकार करने के लिए 'प्रॉमिसरी एस्टॉपेल' के सिद्धांत का आह्वान किया।

जनरल ऑफिसर कमांडिंग-इन-चीफ व अन्य बनाम वी. डॉ. सुभाष चंद्र यादव व अन्य, [1988] 2 एस.सी.सी. 351; ए.पी. प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड II बनाम एम.वी. नायडू, [2001] 2 एस.सी.सी. 62; बिक्री कर अधिकारी व अन्य बनाम श्री दुर्गा ऑयल मिल्स, [1998] । एस.सी.सी. 572 और शर्मा ट्रांसपोर्ट बनाम आंध्र प्रदेश सरकार, [2002]2 एस.सी.सी. 188, को संदर्भित किया गया।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं. 3800/2003

2001 के डब्ल्यू. पी. सं. 5198 में बॉम्बे उच्च न्यायालय के दिनांकित 23.4.2002 के निर्णय और आदेश से।

के साथ

सी.ए. सं. 3801 , 3802 , 3803 , 3804 2003 से।

मुकुल रोहतगी, अतिरिक्त सिंह, विजय सिंह, अनुराग किशोर, विश्वजीत सिंह, श्रीधर वाई. चिताले, सुश्री वी. डी. खन्ना, रवींद्र अदसुरे, मुकेश के. गिरि, आर. एन. करंजावाला, सुश्री नंदिनी गोरे, सुश्री प्रज्ञा बहगल, श्रीमती माणिक करंजावाला, श्रीमती जे. एस. वाड, आशीष वाड, सुश्री युगांधरा झा, रितेश अग्रवाल और ए. एस. पुंडिर उपस्थित दलों के लिए।

न्यायालय का निर्णय दिया गया-

राजेन्द्र बाबू, सी.जे.:

क्या महाराष्ट्र राज्य सरकार द्वारा स्वीकृत विकास नियंत्रण नियमों (डीसीआर) में किया गया संशोधन महाराष्ट्र क्षेत्रीय और नगर नियोजन अधिनियम, 1966 (अधिनियम) के प्रावधानों के अनुसार है, यह यहां विचार का विषय है।

अधिनियम में अन्य बातों के साथ-साथ ग्रेटर बॉम्बे और पुणे की विकास योजना को सुव्यवस्थित करने के लिए क्षेत्रीय विकास प्राधिकरणों का गठन किया गया। अधिनियम के तहत बॉम्बे और पुणे के संबंधित निगमों को क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण के रूप में नामित किया गया था। 8-7-1993 को महाराष्ट्र सरकार ने पुणे नगर निगम (पीएमसी) को बॉम्बे डीसीआर की तर्ज पर अपने डीसीआर में संशोधन करने के लिए अधिनियम की धारा 37 के तहत एक निर्देश जारी किया। 30-9-1993 को पीएमसी ने आधिकारिक राजपत्र में प्रस्तावित संशोधन प्रकाशित किए और अधिनियम की धारा 37(1) के अनुसार आपत्तियां/सुझाव आमंत्रित किए। इसके बाद राज्य सरकार ने प्रस्तावित संशोधनों को मंजूरी दे दी। 22-8-1995 को पीएमसी ने मसौदा नियमों में कोई संशोधन किए बिना डीसीआर में संशोधन के लिए एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया। इसके बाद, राज्य सरकार ने अधिनियम की धारा 37(2) के तहत दिनांक 5-6-1997 की अधिसूचना के माध्यम से संशोधन के प्रस्ताव को मंजूरी दे दी और संशोधित डीसीआर को अधिसूचित किया। यह बताया गया है कि पीएमसी द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव में नियम एन 2.4.11 में प्रस्तावित संशोधन में "बहुत बढिया कथानक" शब्द शामिल नहीं थे। हालाँकि जब मंजूरी दी गई तो राज्य सरकार ने नियमों में कुछ परिवर्धन किए और नियम संख्या 2.4.11 में "बहुत बढिया कथानक" शब्द शामिल है। इन नियमों के तहत अतिरिक्त रूप से दिए गए फ्लोर

स्पेस इंडेक्स (एफएसआई) को पीएमसी द्वारा उचित रूप से मंजूरी दी गई थी। इसके बाद, अतिरिक्त एफएसआई देने के अनुरोध को पीएमसी ने खारिज कर दिया। इसके परिणामस्वरूप वर्तमान मुकदमा हुआ। प्रतिवादियों ने इस संशोधन को इस आधार पर उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी है कि अंतिम मंजूरी देते समय राज्य सरकार द्वारा किया गया परिवर्धन अधिनियम की धारा 37(2) के तहत राज्य सरकार की शक्तियों से परे है। उच्च न्यायालय ने इस तर्क पर याचिका स्वीकार कर ली कि धारा 37(2) की भाषा कहीं भी राज्य सरकार को योजना प्राधिकरण द्वारा प्रस्तुत संशोधनों में अपनी शर्तों या अपने स्वयं के संशोधनों को जोड़ने की अनुमति नहीं देती है। यह भी पाया गया है कि राज्य सरकार मंजूरी देने से पहले प्रभावित पक्षों या प्रस्तावों में संशोधन का सुझाव देने वालों को सुनने के लिए बाध्य है। उच्च न्यायालय ने यह भी बताया कि प्रॉमिसरी एस्टॉपेल के सिद्धांतों को लागू करने पर निगम को इस बात पर जोर देने की अनुमति नहीं दी जा सकती कि अतिरिक्त 0.4 एफएसआई का उपयोग उसी भूखंड पर किया जाए। इस फैसले को हमारे समक्ष चुनौती दी गई है।

अब विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या राज्य सरकार योजना प्राधिकरण द्वारा प्रस्तुत संशोधनों में स्वयं कोई परिवर्तन कर सकती है या नहीं। अधिनियम की विवादित धारा 37 इस प्रकार है:

"37(1) यदि किसी अंतिम विकास योजना के किसी भाग या उसमें किए गए किसी प्रस्ताव में ऐसा संशोधन किया जाता है जिससे ऐसी विकास योजना का स्वरूप नहीं बदलेगा, तो नियोजन प्राधिकरण, या जब राज्य सरकार द्वारा ऐसा निर्देशित किया जाए, तो ऐसे निर्देश की तिथि से साठ दिनों के भीतर शासकीय राजपत्र में और ऐसे अन्य तरीके से जैसा कि वह निर्धारित कर सके, प्रस्तावित संशोधन के संबंध में किसी भी व्यक्ति से आपत्तियां और सुझाव आमंत्रित करते हुए सूचना प्रकाशित करेगा, जो ऐसी सूचना की तिथि से एक महीने के भीतर से अधिक नहीं होगी; और प्रस्तावित संशोधन से प्रभावित सभी व्यक्तियों को भी नोटिस देगा और ऐसे किसी व्यक्ति को सुनवाई देने के बाद, प्रस्तावित संशोधन को संशोधन के साथ, यदि कोई हो, राज्य सरकार को मंजूरी के लिए प्रस्तुत करेगा।''

(1ए).....

(1एए).....

(1बी).....

(2) राज्य सरकार, यदि आवश्यक समझे तो जांच कर सकती है और नगर नियोजन निदेशक से परामर्श करने के बाद, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, संशोधन को ऐसे परिवर्तनों के साथ या बिना, और ऐसी शर्तों के अधीन, जैसा वह उचित समझे, मंजूरी दे सकती है या मंजूरी देने से इनकार कर सकती है। यदि संशोधन को मंजूरी दी जाती है, तो अंतिम विकास योजना को तदनुसार संशोधित किया गया माना जाएगा।"

इस प्रावधान को पढ़ने से पता चलता है कि खंड (1) के तहत, योजना प्राधिकरण प्रस्तावित संशोधन के संबंध में आपत्तियां और सुझाव आमंत्रित करने और सभी प्रभावित व्यक्तियों को नोटिस देने के बाद सरकार को मंजूरी के लिए प्रस्तावित संशोधन प्रस्तुत करेगा। संशोधन करने से पहले जनता के साथ विचार-विमर्श इस स्तर पर समाप्त हो गया है। इसके बाद, सरकार को खंड (2) के तहत मंजूरी देने से पहले आवश्यक जांच करने या न करने की पूर्ण स्वतंत्रता दी गई है। फिर, मंजूरी देते समय, सरकार संशोधनों के साथ या उसके बिना ऐसा कर सकती है। सरकार ऐसी शर्तें लगा सकती है जो वह उचित समझे। सरकार को मंजूरी देने से इंकार करने की भी अनुमति है। यही उपवाक्य (2) का सही अर्थ है। उच्च न्यायालय द्वारा दी गई विपरीत व्याख्या को बरकरार रखना मुश्किल है। धारा (1) के तहत सरकार के लिए मुख्य सीमा यह बनाई गई है कि कोई भी प्राधिकारी विकास योजना के मूल चरित्र को बदलने के लिए संशोधन

का प्रस्ताव नहीं कर सकता है। प्रस्तावित संशोधन केवल विकास योजना की सीमा के भीतर मामूली ही हो सकता है। और ऐसे छोटे-मोटे बदलावों के लिए सरकार के लिए विभिन्न प्रासंगिक कारकों को ध्यान में रखते हुए व्यापक विवेक का प्रयोग करना सामान्य बात है। पुनः, यदि यह मनमाना या अनुचित है तो इसे चुनौती दी जा सकती है। यहां प्रतिवादियों का मामला यह नहीं है कि प्रस्तावित परिवर्तन मनमाना या अनुचित है। उन्होंने इसे यह कहते हुए चुनौती दी कि सरकार को संशोधन में इस तरह के बदलाव करने के लिए अधिनियम के तहत अधिकार नहीं है।

डीसीआर बनाना या उसमें संशोधन करना विधायी कार्य हैं। इसलिए, धारा 37 को डीसीआर में संशोधनों को प्रभावी करने के लिए विधायी शक्तियों के भंडार के रूप में देखा जाना चाहिए। डीसीआर में संशोधन की विधायी शक्ति राज्य सरकार को सौंपी गई है। जैसा कि हम पहले ही बता चुके हैं, धारा 37(2) की सही व्याख्या राज्य सरकार को मंजूरी देते समय आवश्यक संशोधन करने या शर्तें लगाने की अनुमति देती है। धारा 37(2) में विधायिका की मंशा मंजूरी से पहले सार्वजनिक सुनवाई का प्रावधान करने की नहीं है। इस तरह के संशोधन करने की प्रक्रिया धारा 37 में प्रदान की गई है। प्रत्यायोजित कानून पर इसके निर्माण में प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करने के लिए सवाल नहीं उठाया जा सकता है, सिवाय इसके कि जब क़ानून स्वयं उस आवश्यकता के लिए प्रदान करता

है। जहां विधायिका ने किसी नोटिस या सुनवाई का प्रावधान करने का विकल्प नहीं चुना है, कोई भी इस पर जोर नहीं दे सकता है और ऐसी विधायी गतिविधि में प्राकृतिक न्याय को जोड़ना स्वीकार्य नहीं है। इसके अलावा, एक अधीनस्थ विधायी निकाय द्वारा 'ऐसी जांच जो वह आवश्यक समझे' का प्रावधान आम तौर पर अधीनस्थ विधायी निकाय को किसी भी स्रोत से प्रासंगिक जानकारी प्राप्त करने की सुविधा प्रदान करने वाला एक सक्षम प्रावधान है और इसका उद्देश्य किसी को कोई अधिकार प्रदान करना नहीं है। (भारत संघ व अन्य बनाम साइनामाइड इंडिया लिमिटेड व अन्य। (1987) 2 एससीसी 720 पैराग्राफ 5 और 27। आम तौर पर एच.एस.एस. के नियामी व अन्य बनाम भारत संघ और अन्य । (1990) 4 एससीसी 516 और केनरा बैंक बनाम देबासिस दास (2003) 4 एससीसी 557)। विधायी कार्यों का प्रयोग करते समय, जब तक कि अनुचितता या मनमानी को इंगित नहीं किया जाता है, तब तक न्यायालय हस्तक्षेप करने के लिए खुला नहीं है। (आम तौर पर देखें ओएनजीसी बनाम गुजरात के प्राकृतिक गैस उपभोक्ता उद्योगों का संघ 1990 (सप्लीमेंट) एससीसी 397) इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण सही प्रतीत नहीं होता है।

डीसीआर अधिनियम की धारा 158 के तहत तैयार किया गया है। क़ानून के प्रावधानों के तहत बनाए गए नियम क़ानून का हिस्सा बनते हैं। जनरल ऑफिस कमांडिंग-इन-चीफ और अन्य बनाम डॉ. सुभाष चंद्र यादव

और अन्य देखें, (1988) 2 एससीसी 351, पैराग्राफ 14)। दूसरे शब्दों में, डीसीआर के पास वैधानिक बल है। यह भी कानून की एक स्थापित स्थिति है कि किसी विधि के खिलाफ कोई 'प्रॉमिसरी एस्टोपेल' नहीं हो सकता है। एपी प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ।। बनाम एमवी नायडू (2001) 2 एससीसी 62, पैराग्राफ 69, बिक्री कर अधिकारी व अन्य बनाम श्री दुर्गा ऑयल मिल्स (1998) 1 एससीसी 572, पैराग्राफ 21 और 22 और शर्मा ट्रांसपोर्ट बनाम सरकार। एपी (2002) 2 एससीसी 188, पैराग्राफ 13 से 24)। इसलिए, उच्च न्यायालय ने यहां प्रत्यर्थियों द्वारा दायर याचिका को अनुमति देने के लिए 'प्रॉमिसरी एस्टोपेल' के सिद्धांत को लागू करके फिर से गलत किया। उपरोक्त कारणों से, उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को बरकरार नहीं रखा जा सकता है।

उच्च न्यायालय के आदेश को रद्द करके इन अपीलों को स्वीकर किया जाता है और उच्च न्यायालय के समक्ष दायर रिट याचिकाएँ खारिज कर दी जाती हैं।

अपील स्वीकार की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी आराधना (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।